eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

लोक कला के सामाजिक एवं आर्थिक आयाम

दीप्ती[1]
[1]असिस्टैंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, राजकीय महाविद्यालय, कासगंज

Received: 21 Dec 2024 Accepted & Reviewed: 25 Dec 2024, Published : 31 Dec 2024

Abstract

भारतीय संस्कृति एवं परम्परा प्राचीन काल से ही काफी समृद्ध एवं गौरवशाली रही है। इसकी इस समृद्ध संस्कृति एवं परम्परा का प्रमुख कारण इसकी विविधता में निहित है क्योंकि दुनिया की विभिन्न सभ्यताओं, संस्कृतियों एवं रीतियों को इसने न सिर्फ आत्मसात किया अपितु उन्हें अपनी सभ्यता एवं संस्कृति में यथोचित सम्मान एवं स्थान भी दिया है। विश्व की तमाम संस्कृतियों, सभ्यताओं एवं परम्पराओं को अपनी सभ्यता में स्थान देने के पीछे कारण जो भी हो, वर्तमान उससे कदाचित सरोकार नहीं रखता है बल्कि महत्वपूर्ण बात तो ये हैं कि भारतीय संस्कृति की यह अनूठी परम्परा उसे वैश्विक पटल पर वसुधैव कुटुंबकम की परम्परा के प्रतिपादक के रूप में स्वीकृति प्रदान करती है।

मुख्य शब्द– भारतीय संस्कृति, परम्परा, लोक कला, सामाजिक एवं आर्थिक आयाम

Introduction

प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं इसकी समृद्ध परम्परा किसी भी एक धर्म, जाति, समुदाय, विचारधारा, संस्कृति एवं परम्परा से जकड़ी नहीं रही है बल्कि भारत प्राचीन समय से ही वैश्विक सभ्यताओं एवं संस्कृतियों का एक संगम रहा है। अतः भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को वैश्विक सभ्यता एवं संस्कृति कहना बिल्कुल भी अनुचित न होगा अपितु भारत के समृद्धशाली इतिहास को एक नया आयाम देने जैसा होगा जिसके लिए भारतीय संस्कृति एवं परम्परा हर दृष्टिकोण से सर्वश्रेष्ठ है। भारतीय संस्कृति एवं परम्परा की समृद्धि उसकी विस्तृत एवं व्यापक लोक कला में अन्तर्निहित है। भारत की वैश्विक विविधता ने इसे वैश्विक लोक कला के एक प्रमुख केन्द्र के रूप में विकसित करने में एक महती भूमिका अदा की है। भारत न सिर्फ अपनी अन्तर्देशीय लोक कलाओं से समृद्ध है बल्कि विश्व की तमाम विकसित लोक कलाओं से भी समृद्ध है, जिसमें न सिर्फ भारत की अपितु सम्पूर्ण एशियाई देशों एवं यूरोपीय देशों की एक शानदार झलक प्रतिबिम्बित होती है।

जहाँ तक लोक कला की शिक्षा से सम्बन्ध का प्रश्न उठता है, भारत ही नहीं वरन् अखिल विश्व का इतिहास इस बात का प्रमाण है कि लोक कला एवं औपचारिक शिक्षा प्रणाली एक दूसरे से स्वतन्त्र रही है, परन्तु इसका अर्थ यह निकालना बिल्कुल भी सही नहीं होगा कि शिक्षा व्यवस्था का हमारी लोक कला से कोई ताल्लुक नहीं रहा है। इस सन्दर्भ में इस बात का उल्लेख करना भी बहुत महत्वपूर्ण है कि लोक कला के जन्म एवं विकास का इतिहास प्रारम्भ से ही हमारी संस्कृति एवं परम्परा में निहित है जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी अन्तरित होती चली आ रही है, जिसके लिए फिलहाल किसी औपचारिक शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर नहीं होती है। परन्तु हमारी लोक कलाओं में होते ह्रास के कारण आज हमें हमारी लोक कला को शिक्षा से जोड़ने की आवश्यकता महसूस हो रही है। चाहें वह भूत हो या वर्तमान हो लोक कला हमारे समाज का अभिन्न अंग रही है, जिसके उदभव एवं विकास में हमारे समाज की एक

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

महत्वपूर्ण भूमिका रही है। किसी भी चीज के उदभव एवं विकास का प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध हमारे समाज की जरूरतों एवं आवश्यकताओं से होता है उसी प्रकार हमारी लोक कला भी हमारे समाज के सतत विकास की एक अंतर्निहित आवश्यकता रही है। यह आवश्यकता सिर्फ सामाजिक न होकर कुछ हद तक आर्थिक भी रही है। अर्थात् प्राचीन समय से ही यह हमारे समाज की आजीविका का साधन भी रही है।

लोक कला को कई अन्य नामों से भी जाना जाता है जैसे–– जनसामान्य कला, आदि कला, सीमान्त कला, क्षेत्रीय कला, आदिम कला, जनजाति कला एवं ग्रामीण/आंचलिक कला आदि। लोक कला, ललित कला एवं लोकप्रिय/विख्यात कला से बिल्कुल अलग है क्योंकि इसका सम्बन्ध जनसामान्य से है विशेषकर ग्रामीण एवं सीमान्त क्षेत्रों में रहने वाले लोगों से है, जिनके पास इस कला से सम्बन्धित कोई औपचारिक शिक्षा नहीं होती है, बल्कि यह कला पूर्णतः अनौपचारिक एवं सामाजिक शिक्षा पर आधारित है। लोक कला को प्रमुख रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–– मूर्त कला एवं अमूर्त कला। इसे दृश्य कला एवं श्रव्य कला में भी विभाजित किया जा सकता है। लोक कलाओं के विभाजन का कोई एक निश्चित आधार नहीं है। अर्थात् लोक कलाओं का विभाजन अनेकों आधार पर किया जाना सम्भव है, और वहीं दूसरी ओर लोक कला की कोई एक निश्चित एवं सर्वमान्य परिभाषा भी नहीं है। अतः लोक कला का एक निश्चित वर्गीकरण करना एवं परिभाषा देना एक असम्भव सी प्रतीत होने वाली बात के सामान है। सामान्यतः जब हम सामान्य बोलचाल में लोक कला की बात करते हैं तो सम्भवतः हम सिर्फ लोक कला के एक पक्ष को देख या समझ पाते हैं, जो चाहे दृश्य लोक कला (लोक साहित्य, लोक नृत्य, लोक नाटक, लोक मूर्त कला आदि) हो या श्रव्य लोक कला (लोकगीत–बिरहा, आल्हा, कजरी आदि) हो। जो हमारे बातचीत की दिशा और दशा पर निर्भर करता है, परन्तु लोक कला एक बहुत व्यापक शब्द है, जिसमें अनेकों प्रकार की लोक कला अन्तर्निहित है। इन लोक कलाओं का जन्म हमारे ग्रामीण अंचलों एवं सीमान्त क्षेत्रों में हुआ। जिसका सरोकार हमारे ग्रामीण एवं सीमान्त क्षेत्र में रह रहे लोगों की मूलभूत जरूरतों एवं उनकी आवश्यकताओं से है।

ग्रामीण एवं सीमान्त अंचलों में लोक कला का जन्म मूलतः वहाँ रह रहे लोगों की मूलभूत जरूरतों पर केन्द्रित था जो कालान्तर में आजीविका के साधन के रूप में विकसित हुई। परन्तु लोक कला का आजीविका का रूप में विकसित होना और इसके व्यावसायीकरण में काफी अंतर है क्योंकि आजीविका इसके मूलरूप में परिवर्तन की अनुमति नहीं देता है वरन व्यावसायीकरण लोक कला को लोकप्रिय अथवा विख्यात कला का रूप देने पर केन्द्रित है, जो इसके मूल स्वरूप में व्यापक अन्तर पैदा करता है, जो कालान्तर में लोक कला के अस्तित्व पर सवाल पैदा कर सकता है। जो कला के रूप में एक व्यापक संस्कृति एवं परम्परा को एक क्षण में समाप्त कर सकता है। लोक कला का व्यावसायीकरण एक ओर इसके अस्तित्व को बनाये रखने के लिए आवश्यक है, वहीं दूसरी ओर यह लोक कला के अस्तित्व के लिए एक बड़ी चुनौती भी है, अतः ऐसी परिस्थिति में हमें एक ओर लोक कला के व्यावसायीकरण की जरूरत है। वहीं दूसरी ओर लोक कला को इसके दुष्प्रभाव से बचाने की आवश्यकता भी है। इस प्रकार लोक कला के व्यावसायीकरण को एक निश्चित दायरे में मान्यता देने की जरूरत है जिससे कि हमारी सदियों पुरानी लोक कला अपने मूल स्वरूप को बनाये रखने में सक्षम हो सके। एक ओर जहाँ हमारी लोक कला हमारी संस्कृति

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

एवं परम्परा का दर्शन है। वहीं दूसरी ओर हमारे समाज के सामाजिक विकास एवं आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण माध्यम भी है।

लोक कलाओं को परम्परागत एवं विरासत के रूप में लेकर चल रहे कलाकारों की वर्तमान आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है। किसी भी कला के विकास एवं विस्तार में विभिन्न वर्गों एवं समुदाय का एक महत्वपूर्ण योगदान होता है। अतः ऐसे लोक कलाकारों को उचित सरकारी नीतियों के माध्यम से आवश्यक आर्थिक संरक्षण देने की अत्यन्त जरूरत है (शर्मा, 2021)। लोक कला की प्रधान विशेषता यह है कि यह लोक जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है और परम्पराओं के अधीन है। आम लोगों का ऐसा मानना है कि लोक कला ही व्यावसायिक एवं उच्च लोक कला के विकास का एक मजबूत आधार है (राज्य शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद, रायपुर, छत्तीसगढ़ (2021))। इतिहास इस बात की पुष्टि करता है कि भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में कलाओं का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रहा है और भारत का हर एक युग किसी न किसी रूप में कलाओं को अपने आप में समेटे रहा है और यह कहना भी बिल्कुल अतिश्योक्ति न होगा की सम्पूर्ण भारत कलाओं से परिपूर्ण है रत्नाकर।

प्रस्तुत विषय पर खास कोई साहित्य एवं शोध पत्र उपलब्ध न होने के कारण इसकी साहित्य समीक्षा बहुत सीमित है या यह कह सकते हैं कि लोक कला से जुड़े सामाजिक एवं आर्थिक आयामों पर अब तक कोई बहुत विस्तृत अध्ययन नहीं हुआ है, जिस पर गहन अध्ययन इस लोक कला के अस्तित्व को बचाये एवं बनाये रखने के लिए बहुत आवश्यक है। यह मूलतः विभिन्न स्रोतों से उपलब्ध लोक कला के संक्षिप्त इतिहास एवं विविध मौजूद लोक कलाओं के सामान्य जानकारी पर केन्द्रित है। अतः प्रस्तुत अध्ययन को एक मौलिक अध्ययन के रूप में देखा जा सकता है।

लोक–कला : सामाजिक आयाम :– प्राचीन काल से ही लोक कला किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक एवं परम्परागत प्रभावशीलता की अभिव्यक्ति का एक महत्वपूर्ण माध्यम रहा है। विशाल भारत राष्ट्र के सभी राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में प्रत्येक क्षेत्र की अपनी एक अलग सांस्कृतिक पहचान है जो कि उस क्षेत्र में प्रचलित विविध लोक कलाओं के माध्यम से प्रतिबिम्बित होती है। हर प्रदेश की कला की अपनी एक विशेष शैली और पहचान होती है। जिसे हम आम भाषा में लोक कला के नाम से जानते हैं। लोक कला के मुख्य रूप से दो पहलू हैं, जिसमें पहला सामाजिक पहलू है और दूसरा आर्थिक पहलू है। सामाजिक पहलू एवं आर्थिक पहलू लोक कला नामक सिक्के के दो महत्वपूर्ण पक्ष है जिसमें से किसी भी एक की अनुपस्थिति में दूसरे की कल्पना अकल्पनीय है। इस प्रकार लोक कला का सामाजिक पहलू उसका एक प्राथमिक पक्ष है जबकि आर्थिक पहलू उसका द्वितीयक पक्ष है। लोक कला की उत्पत्ति का आधार हमारे बहुआयामी समाज की विविधि सांस्कृतिक परम्पराएं हैं। लोक कला का सामाजिक पक्ष अत्यन्त प्रबल है क्योंकि यह हमारे समाज की देन है जबकि इसका आर्थिक पक्ष आधुनिकता से प्रभावित है। कला प्रारम्भ से ही मनोरंजन एवं सामाजिक सामंजस्य केन्द्रित रही है।

मानवीय भावों, मूल्यों एवं विचारों की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में ही इस धरती पर कला का सृजन हुआ है। कला हमारी सामाजिक व्यवस्था, परम्परा एवं संस्कृति का प्रतिबिम्ब है। कला का हमारे समाज एवं जीवन में बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। कला मनोरंजन का साधन मात्र नहीं है अपितु यह सम्प्रेषण का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है। इस प्रकार हमारे सामाजिक विकास में कला की एक बहुत बड़ी भूमिका है। हमारे

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

विभिन्न सामाजिक कार्यक्रमों एवं सांस्कृति अवसरों पर विविध कलाओं (श्रव्य एवं दृश्य) की झलक मिलती है। हमारी विविध लोक कलाओं में लोक संगीत एक प्रबल लोक कला है जिसकी अनुपस्थिति में सम्भवतः आज के आधुनिक युग में किसी भी सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम की कल्पना असम्भव प्रतीत होती है। लोक संगीत की श्रृंखला हमारे जीवन से मरण तक अनवरत जारी रहती है। इस प्रकार संगीत के अभाव में कोई भी कार्य अधूरा प्रतीत होता है। लोक कलाओं का प्रयोग हमारे नित जीवन में विविध रूपों में दृष्टिगोचर होता है जैसे शिक्षा, आराधना, आकर्षण, मनोरंजन, चिकित्सा, प्रेरणा, संचार, सन्देश, सम्प्रेषण, सामाजिक समरसता एवं जीविकोपार्जन आदि।

लोक कला : आर्थिक आयाम :– लोक कलाओं को हमारे वर्तमान आधुनिक समाज में विविध रूपों जैसे लोक गीत, लोक नृत्य, लोक नाट्य, लोक चित्रकला, लोक शिल्प आदि में देखा और महसूस किया जा सकता है। प्राचीन काल से ही लोक कलाओं का हमारे समाज से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, जिसने हर एक समाज को एक अनूठी एवं अलग पहचान देने की सफल कोशिश की है। इस प्रकार से विविध लोक कलाओं का हमारे समाज में सतत विकास में एक बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मूल रूप से लोक कलाओं का उद्देश्य हमारे समाज में समरसता, सामंजस्य एवं समन्वय स्थापित करना है। परन्तु इसके अतिरिक्त इसका द्वितीयक अन्तर्निहित उद्देश्य हमारे समाज को सामाजिक, सांस्कृति एवं आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाना है। लोक कला सिर्फ मनोरंजन का माध्यम मात्र ही नहीं है वरन् हमारे समाज के लोक कलाकारों के लिए यह जीविका एवं रोजगार का एक प्रमुख साधन और लोक कला प्रेमियों के लिए एक औषधि भी है। लोक कला का गैर आर्थिक इतिहास जितना पुराना है उतना ही पुराना इसका आर्थिक इतिहास भी है। लोक कला का आर्थिक पहलू उतना स्पष्ट और व्यापक नहीं है जितना की गैर आर्थिक पहलू क्योंकि इसका आर्थिक पहलू बहुत थोड़े लोगों तक ही सीमित है, जबकि इसका गैर आर्थिक पहलू समाज के हर एक व्यक्ति को अपने आप में समाहित कर लेता है। जहाँ तक लोक कला के आर्थिक पहलू का सवाल है तो इसका आर्थिक पहलू भी कम व्यापक नहीं है।

प्राचीनकाल में राजघरानों में लोक कलाकारों की उपस्थिति होती थी और उन्हें अपनी सम्बन्धित लोक कला के माध्यम से राजघरानों में सेवा प्रदान करनी होती थी जिसके लिए उन्हें लोक कला की प्रस्तुति हेतु इनाम एवं आय प्राप्त होती थी। परन्तु वर्तमान युग में लोक कला के स्वरूप में काफी परिवर्तन हुआ है जो समय की मांग के अनुरूप है। लोक कलाकार प्रत्यक्ष रूप से लोक कला के आर्थिक पहलू से सरोकार रखते हैं, जबकि परोक्ष रूप से लोक कला से जुड़े तमाम लोग इसके अप्रत्यक्ष आर्थिक पहलू से सरोकार रखते हैं। इस प्रकार से दुनिया की एक बहुत बड़ी आबादी के लिए लोक कला एक आय, जीविका एवं रोजगार का साधन है। पेशेवर लोक कलाकार, लोक कला से जुड़े शिक्षक, लोक कला से जुड़े उत्पादों के वितरक, लोक कला से सम्बन्धित सामग्रियों के वितरक एवं लोक कला से सम्बन्धित संस्थान आदि लोक कला के आर्थिक पक्ष से जुड़े हैं।

लोक कला लोक जीवन का एक अनन्य अंग है, जिसका आधुनिक युग में आर्थिक पक्ष जितना प्रासंगिक है उससे कहीं ज्यादा प्रासंगिक उसका सामाजिक पक्ष भी है। वर्तमान युग के उत्तरोत्तर तकनीकी विकास ने जहाँ एक ओर लोक कलाओं के प्रचार और प्रसार के अनेकों मार्ग प्रशस्त किये हैं वहीं उससे ज्यादा लोक कलाओं के समक्ष चुनौतियाँ भी पैदा की है। परिणामस्वरूप लोक कलाओं का निरन्तर ह्रास हो

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 03, Issue 12, December 2024

रहा है और उनकी मौलिकता भी खतरे में है। हमारा वर्तमान समाज भले ही कितना आधुनिक क्यों न हो गया हो परन्तु हमारे समाज का अस्तित्व आज भी इक्कीसवीं सदी में लोक कलाओं की अनुपस्थिति में कल्पना मात्र ही प्रतीत होता है। समाज को लोक कला की जरूरत आर्थिक मामलों से ज्यादा सामाजिक मामलों में है। इसलिए हमारा आधुनिक समाज आज भी विभिन्न प्रकार की सामाजिक चुनौतियों का सामना करने को मजबूर है, जिसका मूल कारण है–– लोक कलाओं में निरन्तर ह्रास एवं उसके प्रति अरूचि। लोक कला में लोक कल्याण की भावना अन्तर्निहित है जिसका अभिप्राय लोक कला के द्वारा समाज में समरसता, सौहार्द, समता एवं समानुभूति पैदा करने से है जिसकी वर्तमान समाज को काफी आवश्यकता है। लोक कला के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए जनता एवं जनप्रतिनिधियों की भागीदारी अत्यन्त आवश्यक है जिसके लिए सरकार को जमीनी स्तर पर जनता एवं जनप्रतिनिधियों के साथ मिलकर उचित पहल करने की जरूरत है। क्योंकि सतत एवं समन्वित विकास की परिकल्पना लोक कला में निहित है।

सन्दर्भ सूची :

- नो इण्डिया (n.d.) साहित्य, कला और हस्तशिल्प : लोक और जनजातीय कला।
- शर्मा, एस0 (2021), कला संस्कृति–संस्कार : सरकार एवं दरकार दिव्य, हिमाचल।
- बरेठ, जी0लाल (2016) : संगीत उन्नयन में हड़ौती ढूंढाण क्षेत्र के शिक्षण संस्थानों की भूमिका : विद्या वारिधि उपाधि शोध प्रबन्ध : कोटा विश्वविद्यालय, कोटा।
- राज्य शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद : रायपुर, छत्तीसगढ़ (2021) : कला शिक्षा एवं लोक संस्कृति (भाग–1)।
- रत्नाकर, एल0(एन0डी0) : कला और समाज : कला और समाज में शिक्षिक भविष्य की समस्या : कवि रत्नाकर वर्ल्ड प्रेस डॉट कॉम।